78

जनवरी-जून, 2020

मध्य भारती

मानविकी एवं समाजविज्ञान की द्विभाषी शोध-पत्रिका

सम्पादकीय परामर्श मण्डल

- प्रो. पी.के. राय
- प्रो. ए.एन. शर्मा
- प्रो. आनंद प्रकाश त्रिपाठी
- प्रो. अशोक अहिरवार
- प्रो. दिवाकर राजपूत
- प्रो. डी.के. नेमा
- प्रो. नागेश दुबे
- डॉ. अनुपमा कौशिक
- डॉ. प्रकाश जोशी

मध्य भारती

मानविकी एवं समाजविज्ञान की द्विभाषी शोध-पत्रिका

अंक-78, जनवरी-जून 2020

ISSN 0974-0066 (पूर्व-समीक्षित अर्द्धवार्षिक शोध-पत्रिका)

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

UGC Care List, Group-C (Multi disciplinary), Sl.no.-15

प्रकाशित रचनाओं के अभिमत से डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर या सम्पादकों की सहमति अनिवार्य नहीं है तथा यहाँ प्रकाशित आलेखों की 'प्लेजिरिज्म' (Plagiarism) सम्बन्धी शुचिता की जिम्मेदारी लेखकों की है।

सम्पादकीय पत्र व्यवहार :

मध्य भारती

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय

सागर - 470003 (म.प्र.)

दूरभाष : (07582) 297133

ई-मेल : madhyabharti.2016@gmail.com

आवरण : डॉ. छबिल कुमार मेहेर

मुद्रण :

तेजस मोमेंटो एवं गिफ्ट हाउस

सरस्वती वाचनालय, गौर मूर्ति, तीनबत्ती

सागर, मध्यप्रदेश-470002

सदस्यता शुल्क		आजीवन
	प्रति अंक	
व्यक्तिगत	रु. 150/-	रु. 2000/-
संस्थागत	रु. 200/-	रु. 4000/-

मध्य भारती

मानविकी एवं समाजविज्ञान की द्विभाषी शोध-पत्रिका

ISSN 0974-0066

(अंक-78, जनवरी-जून, 2020)

संरक्षक

प्रो. राघवेन्द्र पी. तिवारी

कुलपति

प्रधान सम्पादक

प्रो. अम्बिकादत्त शर्मा

सम्पादक

प्रो. भवतोष इन्द्रगुरू

प्रो. ब्रजेश कुमार श्रीवास्तव

डॉ. आशुतोष कुमार मिश्र

प्रबन्ध सम्पादक

डॉ. छबिल कुमार मेहेर

डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय

सागर (मध्यप्रदेश)–470003

दूरभाष : (07582) 297133

ई-मेल : madhyabharti.2016@gmail.com

डॉ. भीमराव अम्बेडकर की पत्रकारिता और आज़ाद भारत का सपना

विवेक कुमार जायसवाल एवं संजय शर्मा

डॉ. भीमराव अम्बेडकर के व्यक्तित्व के बहुत सारे आयाम हैं जिनसे पूरी दुनिया परिचित है। विधि के जानकार, अर्थशास्त्री, दर्शनशास्त्री, समाजशास्त्री और समस्त मानव जाति के कल्याणकारी पक्षों और कई विषयों पर ज्ञान रखने वाले व्यक्ति के रूप में उनकी पहचान है। सामान्यतया उनके व्यक्तित्व के बहुत सारे आयामों पर बात होती है लेकिन उनके एक अन्य व्यक्तित्व और भूमिका पर बहुत कम चर्चा की जाती है। वह है, एक लेखक और पत्रकार का। आज भी उनके बहुत सारे लेखन मौजूद हैं। चूंकि वह एक कानूनविद् थे, इसलिए उनका लेखन से जुड़ा रहना स्वाभाविक था। लेकिन एक पत्रकार के रूप में लेखन उनकी अन्य लेखनी से उन्हें अधिक विशिष्ट बनाता है। डॉ. अम्बेडकर द्वारा निकाले गये जिन पत्रों का जिक्र मिलता है उनमें 'मूकनायक', 'बहिष्कृत भारत', 'जनता', 'समता' और 'प्रबुद्ध भारत'[1] प्रमुख हैं। 'नवयुग' (पृ.98, 13.04.1947) में प्रकाशित एक साक्षात्कार में उनका एक कथन छपा है–"समाचार के जन्म से मुझे उतनी ही खुशी मिलती है जितनी किसी के घर बच्चा पैदा होने से।" इससे पता चलता है कि पत्रकारिता के क्षेत्र में उनका कितना झुकाव था और वे सूचनाओं के प्रति कितने उत्सुक, सचेत और जागरूक थे। अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने मराठी भाषा को माध्यम बनाया। उनके ज्यादातर लेख मराठी भाषा में मिलते हैं। स्वयं द्वारा निकाले गये पत्रों के अतिरिक्त भी उन्होंने 'केसरी', 'समता' और 'नवाकाल' जैसे कई पत्रों के लिए भी अपनी कलम चलाई।

डॉ. अम्बेडकर के छुआछूत के खिलाफ़ अभियानों और गांधी से उनके वाद-विवाद पर दुनिया के बहुत से मशहूर अख़बार काफ़ी दिलचस्पी रखते थे। लंदन का 'द टाइम्स', ऑस्ट्रेलिया का 'डेली मर्करी', 'न्यूयॉर्क टाइम्स', 'न्यूयॉर्क एम्सटर्डम न्यूज़', 'बाल्टीमोर अफ्रो-अमरीकन', 'द नॉरफॉक जर्नल' जैसे अख़बार अम्बेडकर के विचारों और अभियानों को प्रमुखता से प्रकाशित करते थे। इसके अलावा अमरीका के अश्वेतों द्वारा संचालित कई पत्र-पत्रिकाएं, डॉ. अम्बेडकर के विचारों और आंदोलनों को अपने यहां जगह देते थे। भारत के संविधान के निर्माण में अम्बेडकर की भूमिका हो या फिर संसद की परिचर्चाओं में उनके भाषण हों, या फिर नेहरू सरकार से डॉ. अम्बेडकर के इस्तीफ़े की ख़बर हो। इन सब पर पूरी दुनिया के अखबार बारीक़ी से नज़र रखते थे।

'मूकनायक', डॉ. अम्बेडकर का पहला मराठी पाक्षिक है जो जनवरी 1920 में प्रकाशित हुआ। इस पत्र को निकालने की प्रेरणा उन्हें बुद्ध, कबीर और ज्योतिबा फुले (सत्यशोधक समाज) से मिलती है। यह सभी व्यक्तित्व 'लोक' की चिंता करते थे। इसीलिये उनकी भावना से प्रेरित होकर डॉ. अम्बेडकर भी 'लोक पत्रकारिता' करना चाहते थे। इसी भावना और प्रेरणा के परिणामस्वरूप 'मूकनायक' का उदय

मध्य भारती-78, जनवरी-जून, 2020, ISSN 0974-0066, *pp. 70-75*
यूजीसी केयर लिस्ट, ग्रुप-सी (मल्टीडिसिप्लिनरी), क्र.सं.-15

होता है। इस पत्रिका को शुरू करने के कुछ समय पहले ही 1917 में डॉ. अम्बेडकर विदेश से शिक्षा लेकर लौटे थे। पूरी दुनिया के लिए यह समय चिंतन का समय था क्योंकि इसी दौर में रूसी क्रान्ति (बोल्शेविक) अपने चरम पर था और रूस के साथ-साथ पूरी दुनिया भयानक उथल-पुथल के दौर से गुजर रही थी। डॉ. अम्बेडकर के लेखों और शीर्षकों में 'क्यों' शब्द की पुनरावृत्ति बार-बार होती है. इससे प्रमाणित होता है है कि उनके भीतर सवाल पूछने की प्रवृत्ति और जिज्ञासा थी। यह उनकी तर्कयुक्त वैचारिकता को भी प्रमाणित करती है। सामान्य बौद्धिकता के कारण ऐसा नहीं था। बल्कि उनके भीतर प्रखर विधिवेत्ता, परिवर्तनकारी समाज चिंतक, वर्ण और जातिभेद से उत्पन्न यथास्थिति के विरुद्ध संतुलित विद्रोही स्वभाव के गुणों के कारण उनके पत्रकारीय लेखन में यह प्रभाव दिखाई पड़ता है। डॉ. अम्बेडकर को पत्रकारिता के क्षेत्र में इसलिए भी आना पड़ा क्योंकि वे मानते थे कि जो कुछ इस दौर की पत्रकारिता में लिखा जा रहा है उनमें समाज के वंचित वर्ग गायब हैं। उस दौर की पत्रकारिता पर की गई यह टिप्पणी महत्त्व की है। "गांधी-अम्बेडकर पूर्व की हिन्दी पत्रकारिता में हाशिये पर से भी जो दलित वर्ग नदारद था, वह इस दौर में 'हरिजन' बहिष्कृत आदि संबोधनों के साथ बहस की केन्द्रीय धारा में शामिल हुआ। अम्बेडकरी आन्दोलन ने अस्पृश्यता, जातिभेद आदि सामाजिक प्रश्नों को इस सीमा तक उठा दिया था कि न केवल हिन्दी की गांधीवादी पत्रकारिता बल्कि स्वयं गांधी की पत्रकारिता में दलित 'हरिजन' रूप में ही उपस्थित हुआ। इसके लिए कारण था पत्रकारिता पर-अम्बेडकर की छाप"।[2] उनके सिलसिलेवार लेखन के कारण ही उनकी पत्रकारिता में एक युग का बोध होता है.

हम जानते हैं कि उस दौर की पत्रकारिता का स्वरुप मिशनरी था। उस दौर की पत्रकारिता में तथ्य और मूल्य ही पत्रकारिता की आत्मा थे और इसे नए समाज के रचनात्मक साधन के रूप में जाना जाता था। हालांकि आज भी पत्रकारिता को सिद्धान्ततः इसी रूप में जाना जाता है लेकिन आज तथ्यों और मूल्यों का क्षरण होता लगातार दिखाई पड़ता है। डॉ. अम्बेडकर की चिंता इसी बात को लेकर थी और इसीलिए वे मूल्य आधारित समाज बनाने की बात करते हैं। जिस नए समाज को बनाने बात वे करते हैं, वह किन मूल्यों पर आधारित होगा, पत्रकारिता के माध्यम से यही बताने का प्रयास उन्होंने किया है। डॉ. अम्बेडकर की कल्पना में स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व की भावना युक्त समाज था जो जाति भेद से रहित हो। यही मूल्य आज भारतीय संविधान के प्राण तत्व हैं।

वर्ण व्यवस्था द्वारा निर्धारित मूल्यों पर उन्होंने काफी प्रहार किया है। पेशेगत और जिम्मेदारियों के वर्णगत वर्गीकरण को उन्होंने अस्वीकार किया और उन्होंने इसके दुष्परिणामों की तथ्य आधारित परख की। एक जगह वे लिखते हैं कि "युद्ध का काम केवल क्षत्रिय का ही क्यों होना चाहिए? यदि सभी व्यक्तियों को शास्त्र ग्रहण करने का अधिकार दिया गया होता तो इस महानतम देश (भारत) को कोई आक्रान्ता नहीं जीत पाता। यूरोप में 1939-1945 का महायुद्ध अनिवार्य सैन्य भर्ती से जीता गया जिसमें किसी जाति विशेष को इसका श्रेय नहीं जाता है।"[3] उनके कहने का आशय यह है कि देश सेवा, रक्षा और सम्पन्नता की जिम्मेदारी किसी जाति विशेष तक सीमित नहीं की जा सकती। जाति आधारित पेशा और उसके आधार पर होने वाले भेदभाव पर उनकी टिप्पणी बहुत ही गंभीर है। उन्होंने बढ़ती बेरोज़गारी के कारणों को भी इस माध्यम से रेखांकित करने की कोशिश की है। वे श्रम विभाजन की आवश्यकता को स्वीकार करते हैं लेकिन इस बहाने व्याप्त गैर-बराबरी पर कड़ा प्रतिरोध करते हैं। वे लिखते हैं कि "श्रम विभाजन निश्चय ही सभ्य समाज की आवश्यकता है, परन्तु किसी भी सभ्य समाज में श्रम विभाजन की व्यवस्था श्रमिकों का विभिन्न वर्गों में अस्वाभाविक विभाजन नहीं करती। भारत की जाति प्रथा की एक और विशेषता यह है कि यह श्रमिकों का अस्वाभाविक विभाजन ही नहीं करती बल्कि विभाजित विभिन्न वर्गों को एक-दूसरे की अपेक्षा ऊँच-नीच भी करार देती है, जो कि विश्व के किसी भी समाज में नहीं पाया जाता।"[4] वे लिखते

हैं कि "जाति-प्रथा पेशे का दोषपूर्ण-निर्धारण ही नहीं करती बल्कि मनुष्य को जीवन भर के लिए एक पेशे में बाँध भी देती है, भले ही उस पेशे में अनुपयुक्त या अपर्याप्त आय होने के कारण वह भूखा मर जाए.....हिन्दू धर्म की जाति प्रथा, किसी भी व्यक्ति को ऐसा पेशा चुनने की अनुमति नहीं देती है जो उसका पैतृक पेशा न हो, भले ही वह उसमें पारंगत हो। इस प्रकार पेशा परिवर्तन की अनुमति न देकर जाति प्रथा भारत में बेरोजगारी का एक प्रमुख और प्रत्यक्ष कारण बनी हुई है।"[5]

अंग्रेजी राज में हुए कुछ सामाजिक सुधारों जैसे विधवा पुनर्विवाह, अछूत शिक्षा समर्थन, बालिका विवाह का विरोध आदि कार्यों की उन्होंने खुलकर प्रशंसा भी की। उनके समकालीन कई पत्रकारों और आधुनिक विचार वाले लोगों ने भी इसको सही माना। लेकिन इन सबसे आगे बढ़कर उनकी आशंका कहीं और थी। वे यह जानते थे कि अंग्रेज एक न एक दिन चले जायेंगे लेकिन जब उनके देश की जनता पर देश के ही लोगों का शासन होगा तब समाज को जिन आधारों पर वर्गीकृत किया गया है तो क्या उस आधार पर देश का प्रतिनिधित्त्व करने का सभी वर्गों को समान अवसर मिलेगा? उनकी यह चिंता समाज के हाशिये के लोगों को लेकर थी। इसी चिंता से घिरकर उन्होंने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से अनेक आशंकाएं व्यक्त की हैं। वे यूरोप से बहुत प्रभावित थे और यहाँ की जाति व्यवस्था को पूरी तरह ध्वस्त कर सांस्कृतिक रूप से समाज का यूरोपीकरण करना चाहते थे। वे व्यक्तिवादी या एकपक्षीय कायदों (जैसे-मनुस्मृति) का विरोध करते थे। उनकी आस्था लोकतांत्रिक मूल्यों में थी। डॉ. अम्बेडकर स्वयंभू प्रतिनिधिपन और मनोनयन जैसी पद्धतियों के कटु आलोचक थे। उनका कहना था कि भागीदारी में निर्वाचन की प्रक्रिया को अमल में लाया जाए, "डॉ. अम्बेडकर राजनीति के यथार्थवादी पक्ष के समर्थक थे। उन्हें प्रजातांत्रिक राज्य अधिक प्रिय थे। उनके प्रजातांत्रिक विचारों की अच्छाई हमें उनकी व्यावहारिक देन से नापनी चाहिए। उनकी व्यावहारिक दृष्टि का अर्थ है सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक और नैतिक मूल्यों के निर्धारण में समाज के सब सदस्यों का हाथ होना चाहिए।"[6]

सामाजिक-धार्मिक एकता के पक्ष में डॉ. अम्बेडकर मूकनायक (28 फरवरी 1920 अंक-3 हिन्दी) में लिखते हैं कि "थाली से थाली स्पर्श कर भोजन करने से एकता नहीं आयेगी। एकता के लिए जीवन-शैली, जीवन मूल्य बदलने होंगे।"[7] समाज सुधार की कड़ी में वे इस प्रश्न से बार-बार जूझते हुए दिखाई पड़ते हैं- जैसे- कि हमें समाज में परिवर्तन लाने के लिए राजकीय मांगे मांगनी चाहिए या सामाजिक दासता में जो हमारे लोक अटके हुए हैं उनको मुक्त कराने का प्रयास करना चाहिए। ऐसा नहीं था कि बाबा साहेब कोई पहले समाज सुधारक थे। उनके पहले से भी समाज सुधार के लिए कई लोग आगे आये लेकिन वे समाज सुधार की इस श्रृंखला के आधुनिक कड़ी थे।

अस्पृश्यता जैसे ज्वलंत तथ्यों से डॉ. अम्बेडकर यह साबित करना चाहते हैं कि समाज के ही कुछ ख़ास लोग, जिनमें हिन्दू महासभा के लोग प्रमुख रूप से शामिल हैं, ने कथित तौर पर 'अछूत' कहे जाने वाले लोगों के रहन-सहन, खान-पान पर अनैतिक प्रतिबन्ध लगा रखे हैं। हिन्दू महासभा के प्रति उनका यह विरोध दूसरे रूप में समझा गया। जब हिन्दू महासभा को अंग्रेज सत्ता सौंप रहे थे उस समय उन्होंने इस तरह की मानसिकता रखने वाले लोगों को सत्ता सौंपने का विरोध भी किया था। यही कारण था कि उन्हें हिन्दू महासभा के कुछ लोगों द्वारा उन्हें आज़ादी का विरोधी करार दे दिया गया। जबकि डॉ. अम्बेडकर का विरोध इसलिए था क्योंकि उन्हें यह आशंका थी कि आज़ादी के बाद समाज के अस्पृश्य वर्ग को कुछ भी नहीं मिलेगा। वे वंचित और अस्पृश्य वर्ग के प्रति सहानुभूति नहीं चाहते थे बल्कि 'स्वराज्य' के सही-सही अर्थ को लागू करना चाहते थे। उनके अनुसार सहभागिता का लोकतांत्रिक मूल्य 'जातिवार प्रतिनिधित्व' की मान्यता के रूप में है। उनका कहना था कि राजकीय सुधार और सामाजिक सुधार दोनों के कदम एक साथ और एक जैसे पड़ने चाहिए। उनका यह विचार 'यरवदा' समझौते के रूप में आरक्षण

में काव्यात्मक भाषा पर ध्यान देने के बजाय तथ्यों का विवेचन करते थे। क्योंकि पत्रकारिता का विचार पक्ष ही पत्र का जीवन और प्राण होता है। उनका मानना था कि यदि अखबार से विचार पक्ष गायब है तो वह अखबार व्यर्थ है। विचार पक्ष के अभाव में उसे गल्प सामग्री के अलावा कुछ नहीं कहा जा सकता। वे एकपक्षीय बुद्धिवाद के विरोधी थे। वे पत्रकारिता में वाक् चातुर्य की अपेक्षा सामाजिक उद्देश्यों के प्रति पत्रकार की निष्ठा और प्रतिबद्धता को सबसे ऊपर रखते थे।

डॉ. अम्बेडकर ने राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक जो विषमता के विरुद्ध संघर्ष करने के उद्देश्य से 'समाज समता संघ' बनाया था। इसमें उन्होंने समाज के अनेक तबकों और पेशे से जुड़े हुए लोगों को शामिल किया। यहीं से 'समता' नामक पत्र शुरू होता है। इसका प्रवेशांक 29 जून 1928 को निकला था। उनके समकालीन जो पत्र निकलते थे, वे केवल राजनीतिक प्रश्नों को प्रमुखता से उठाते थे लेकिन सामाजिक प्रश्नों पर वे सभी यथास्थितिवाद के समर्थक थे और तटस्थ थे। 'समता' नामक यह पत्र कई विवादों से घिरा रहा क्योंकि डॉ. अम्बेडकर ने इसके माध्यम से काफी उत्तेजक बहसें उठाईं और कई सारे समकालीन पत्रों में छपने वाले विरोधों का उत्तर भी दिया। बाद में यही पत्र' जनता' के रूप में नामांतरित हो गया। डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में 14 अक्टूबर 1956 को सामूहिक धर्म परिवर्तन किया गया। इसी दिन 'जनता' पत्र का नाम बदलकर 'प्रबुद्ध भारत' कर दिया गया।

डॉ. अम्बेडकर ने बहुत सारे सामाजिक प्रश्नों को उठाया जिनमें शिक्षा भी एक बड़ा मुद्दा था। वंचित, निर्धन, पिछड़े और स्त्रियों की शिक्षा को लेकर उनकी चिंता कई लेखों में दिखाई देती है। उन्होंने केवल किताबी शिक्षा के अधिक विस्तार किये जाने काफी आलोचना की थी। उन्होंने लिखा कि "कृषि-कारीगरी व अन्य उपयुक्त धंधों में लगे लोगों के लिए यह शिक्षा कोई सहायता नहीं पहुंचाती। उनके धंधे दूसरे देशों की संपत्ति बढ़ाने में बहुत उपयोगी है। हमारे देश में शिक्षा प्रसार हुआ है ऐसा कह सकते हैं, परन्तु इस प्रसार से मात्र पुस्तकीय ज्ञान ही बढ़ा है- वे भी विशेषकर गैरदलित वर्ग तक ही सीमित रहा है। लुहार, बढ़ई, किसान, बुनकर, बहिष्कृत वंचितों की संख्या में वृद्धि हुई है।[11]

डॉ. अम्बेडकर की पत्रकारिता की पूरी यात्रा को देखें तो हम पाते हैं कि उन्होंने समाज के दमित-वंचित तबकों की आवाज़ को उन्होंने 'मूकनायक' के माध्यम से रखते हुए समाज की समस्त चिंताओं और लोकतांत्रिक मूल्यों को केंद्र में रखते हुए उन्होंने भारतीय जनमानस को 'प्रबुद्ध भारत' तक पहुंचाने का काम किया है। उनके पत्रों के नाम उनकी आस्था, उनकी कल्पना और उनके विचारों से मेल खाते हैं और वे अपनी लेखनी में पूरी तरह अंतिम पायदान पर खड़े सामाजिक वर्ग की बेहतरी के लिए प्रतिबद्ध हैं। डॉ. अम्बेडकर ने अपनी पत्रकारिता के माध्यम से जिस समतामूलक और गैर-संवैधानिक बन्धनों से मुक्त समाज का सपना देखा था वह पूरी तरह फलीभूत तो नहीं हुआ है। यह भी सच है कि उनका सपना रातों-रात पूरा होने वाला सपना नहीं था, ऐसा उन्होंने खुद भी लिखा है। एक लम्बी प्रक्रिया से गुजरकर ही उनके सपनों को साकार किया जा सकता है। संविधान, सामाजिक प्रयासों, शिक्षा और सबसे महत्त्वपूर्ण माध्यम 'पत्रकारिता' के माध्यम से हम एक समतामूलक समाज की स्थापना कर सकने में सक्षम हो सकते हैं। आज के दौर में पत्रकारिता के क्षेत्र में भी नये मूल्यों को गढ़ने की जरूरत है। इसके अलावा तथ्यों के साथ और समाज सापेक्ष पत्रकारिता में नए मानदंडों की जरूरत है। हम सबको मिलकर इसके लिए प्रयास करने होंगे जिससे लोकतांत्रिक और समता आधारित समाज को मजबूती मिल सकेगी।

संचार एवं पत्रकारिता विभाग,
डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)-470003

शैक्षिक अध्ययनशाला,
डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)-470003

संदर्भ-

1. अम्बेडकर, गांधी और दलित पत्रकारिता, श्यौराज सिंह 'बेचैन, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली 2010 पृ. 134
2. वही. पृ. 237
3. अम्बेडकर, गांधी और दलित पत्रकारिता, श्यौराज सिंह 'बेचैन, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली 2010, पृ. 145
4. जाति भेद का उच्छेद, डॉ. अम्बेडकर, गौतम बुक सेंटर नई दिल्ली, 2010, पृ. 36
5. जाति भेद का उच्छेद, डॉ. अम्बेडकर, गौतम बुक सेंटर नई दिल्ली, 2010, पृ. 37
6. दलित पत्रकारिता : सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक व राजनीतिक चिंतन- भाग दो, मोहनदास नैमिशराय, नटराजन प्रकाशन, 2008
7. अम्बेडकर, गांधी और दलित पत्रकारिता, श्यौराज सिंह 'बेचैन, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली 2010, पृ. 146
8. जाति भेद का उच्छेद, डॉ. अम्बेडकर, गौतम बुक सेंटर नई दिल्ली, 2010, पृ. 36
9. अम्बेडकर, गांधी और दलित पत्रकारिता, श्यौराज सिंह 'बेचैन, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली 2010, पृ. 197
10. जाति भेद का उच्छेद, डॉ. अम्बेडकर, गौतम बुक सेंटर नई दिल्ली, 2010, पृ. 32
11. डॉ. अम्बेडकर का पत्र-4.8.1913, डॉ. अम्बेडकर कोर्रेस्पोंडेंस, विजय गंगाराम सुर वाडे, पृ.01, संदर्भः अम्बेडकर, गांधी और दलित पत्रकारिता, श्यौराज सिंह 'बेचैन, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स, नई दिल्ली 2010, पृ. 228